मौलिक सिद्धांत – 1

समानगुणाभ्यासो हि धातूनां वृद्धिकारणम्'' आयुर्वेदीय मौलिक सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में कार्श्य रोग में वृंहणीय महाकषाय का प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. शंकर लाल शर्मा

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 1992

चिकित्सा जगत में व्याप्त मौलिक सिद्धान्तों की उपेक्षा एवं द्रव्यमूलक चिकित्सा के प्रति चिकित्सकों की उदासीनता देखकर, अध्येता ने आचार्य चरक के षड्विरेचन शताश्रितीयाध्यायोक्त वृंहणीय महाकषाय (च.सू. 4/9(2)) की कार्श्य रोग में सामान्य विशेष के मूल सिद्धान्तानुरूप धातुवृद्धिपरक कार्मुकता के निर्धारणार्थ प्रायोगिकाध्ययन के माध्यम से विषय का अनुसंधानार्थ चयन किया है।

''समान गुणाभ्यासो हि धातूनां वृद्धिकारणम्'' – इस सर्वविदित आयुर्वेदीय चिकित्सा सिद्धान्त के पुष्ट्यर्थ ''धातुक्षयजोत्पन्न कार्श्य'' रोग की सम्प्राप्ति विघटन शोध प्रबन्ध का मूल एवं प्रमुख विषय है।

शोध प्रबन्ध में प्रयोग दृष्ट्या सहज विकारादि से जातोत्तर उभय प्रकार के आबालावृद्धावस्था में सम्प्राप्त रोगियों का चयन किया गया है। 10 रोगियों में वृंहणीय महाकषाय क्वाथ का मुख से सेवन कराया गया। क्वाथ निर्माण हेतु वृंहणीय महाकषाय 20 ग्राम तथा जल 320 ग्राम लेकर 40 ग्राम शेष रखा गया, इस प्रकार निर्मित क्वाथ 40 ग्राम प्रातः तथा 40 ग्राम सायं भोजन पूर्व एक माह तक सेवन कराया गया ।

शोध कार्य समाप्ति पर औषध परिणाम विवेचन निम्नवत् रहा –

अलाभ (0–25 प्रतिशत लाभ को माना गया) 0 प्रतिशत आतुरों में पाया गया ।

आंशिक लाभ (26–50 प्रतिशत लाभ को माना गया) 40 प्रतिशत आतुरों में पाया गया ।

मध्यम लाभ (51–75 प्रतिशत लाभ को माना गया) 60 प्रतिशत आतुरों में पाया गया ।

उत्तम लाभ (76–100 प्रतिशत लाभ को माना गया) 0 प्रतिशत आतुरों में पाया गया ।

वृंहणीय महाकषाय का संहिता निर्दिष्ट प्रक्रियाओं के अनुसार सेवन करवाकर अध्येता ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि आयुर्वेदीय कषाय चिकित्सा का अपना एक महत्व है। इस चिकित्सा से रोगियों को यथाशक्य एवं अल्प व्यय में अधिक लाभ पहुंचाया जा सकता है।

मौलिक सिद्धांत – 2

विचर्चिका व्याधि की सैद्धान्तिक अवधारणा एवं उसका विनिश्चितीकरण

अध्येता : डा. भैरोसिंह मीणा

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. आशुतोष तिवारी

वर्ष : 1992

विचर्चिका रोग, क्षुद्रकुष्ठों में सबसे अधिक पाया जाने वाला एवं कृच्छ्र साध्य रोग है। अतः अध्येता ने विचर्चिका रोग का निदान, सम्प्राप्ति एवं चिकित्सात्मक अध्ययन कर परिणाम निर्धारित करने का प्रयास किया है।

अध्येता ने प्रायोगिक अध्ययन हेतु 15 रोगियों पर दो प्रकार के योगों (सुश्रुतसंहिता, चिकित्सास्थान 10) का प्रयोग किया है–

आभ्यन्तर प्रयोग – पिप्पली चूर्ण 1–1 ग्राम मात्रा में दिन में 3 बार गोमूत्र अनुपान के साथ ।

बाह्य प्रयोग – कुटजादि विशेष योग 5–10 ग्राम मात्रा में गोमूत्र के साथ लेप ।

औषध प्रयोग अवधि 6 सप्ताह रखी गई ।

औषध प्रयोग से विचर्चिका रोग के औसत 74.5 प्रतिशत लक्षणों का शमन हुआ ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध से अध्येता इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि विचर्चिका व्याधि में पिप्पली चूर्ण का आभ्यंतर तथा कुटजादि विशेष योग का बाह्य प्रयोग अधिक कार्यकारी सिद्ध हुआ है ।

मौलिक सिद्धांत – 3

''प्राकृतः सुखसाध्यस्तु वसन्त शरदुद्भवः'' प्राकृत ज्वर सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ ''लङ्घनं स्वेदनं कालः'' इस चिकित्सा सिद्धान्त का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 1992

प्राकृत ज्वर का निर्धारण, निरापद एवं सुलभ चिकित्सा सूत्रों का विश्लेषण तथा शरद् एवं वसन्त ऋतु में उद्भूत ज्वर के लिए चिकित्सा जगत में व्याप्त माहार्ष चिकित्सा पद्धति को सीमित करने के उद्देश्य से अध्येता ने सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक परिप्रेक्ष्य में प्राकृत ज्वर रोग विवेचन को आनुसंधानिक दृष्टि से चयन किया है। लंघनादि उपक्रम मात्र से भी प्राकृत ज्वर में चिकित्सा संभव है, यही सिद्ध करना शोध प्रबन्ध का मूल ध्येय है।

शरद् एवं वसन्त ऋतु में प्राप्त ज्वरातुरों को अनुसंधान हेतु चुना गया है। प्रत्येक ऋतु में 20–20 रोगियों का चयन कर उभय उपक्रमों में से शरद् ऋतु के 8 रोगियों में लंघन एवं 12 रोगियों में तिक्त रस साधित यवागू (चरकसंहिता,

चिकित्सास्थान 3/142) का प्रयोग करवाया गया। इसी प्रकार वसन्त ऋतु में 12 रोगियों में लंघन एवं 8 रोगियों को तिक्त रस साधित यवागू सेवन करवाकर प्रायोगिक स्वरूप को प्रतिपादित किया गया। तीन से छः दिन तक उपर्युक्त दोनों उपक्रमों का यथावश्यक उपयोग किया गया । शरद् ऋतु में कालकृत पित्त प्रकोप के कारण तिक्त रस साधित यवागू अपेक्षाकृत अधिक रोगियों में दी गई तथा वसन्त ऋतु में कालकृत कफ प्रकोप के कारण लंघन को अधिक महत्व प्रदान किया गया।

शरद् ऋतु में

वर्ग अ – यवागू रोग रोगी बलानुसार

अवधि – 3–5 दिन

अवधि लंघन – प्रथम दिन

वर्ग ब – अवधि लंघन 3–6 दिन

वसन्त ऋतु में

वर्ग अ – लंघन + यवागू

अवधि लंघन – प्रथम दिन

अवधि यवागू – 3 से 5 दिन

मात्रा – रोग रोगी बलानुसार

वर्ग ब – अवधि लंघन 3–6 दिन

शरद् ऋतु के 8 रोगियों में लंघन उपक्रम का परिणाम 75.8 प्रतिशत तथा 12 रोगियों में तिक्त रस साधित यवागू प्रयोग का लाभ 68.1 प्रतिशत रहा। इसी प्रकार वसन्त ऋतु में 12 रोगियों पर लंघन उपक्रम का परिणाम 64.2 प्रतिशत तथा 8 रोगियों पर तिक्त रस साधित यवागू प्रयोग का लाभ 67.3 प्रतिशत रहा। जो सांख्यिकीय दृष्टिकोण से भी सार्थक रहा। अतः प्राप्त आंकड़ों के आधार पर अध्येता ने यह निष्कर्ष निकाला कि ''लङ्घनं स्वेदनं कालः'' यह सिद्धान्त वसन्त तथा शरद् ऋतु जनित प्राकृत ज्वर चिकित्सार्थ सिद्ध होता है।

मौलिक सिद्धांत – 4

वातोदर में अग्नि विकृति विनिश्चय तथा रसोन तैल प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. महेश कुमार गुप्ता

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. आशुतोष तिवारी

वर्ष : 1994

अग्नि व उदर रोग, अग्नि और वातोदर एवं वातोदर का विनिश्चितकरण तथा इस रोग में रसोन तैल के चिकित्सात्मक प्रभाव को ज्ञात करना ही शोध प्रबन्ध का उद्देश्य है।

प्रत्यात्म लिंग के आधार पर प्रश्नावली तैयार कर अद्यतन प्राप्त रोग के आधार पर व्याधि का विनिश्चय करते हुए रसोन तैल की कार्मुकता का अध्ययन किया गया। इस कार्य हेतु 20 रोगियों का चयन किया गया। रोगियों को रसोन तैल (भैषज्यरत्नावली, उदररोगचिकित्सा) 10–10 मि.लि. मात्रा में प्रातः एवं सायंकाल में 30 दिन तक प्रयोग कराया गया । अनुपान रूप में दुग्ध का प्रयोग किया गया ।

औषध परिणाम विवेचन निम्न प्रकार रहा –

उत्तम लाभ (60–100 प्रतिशत लाभ)– 7 आतुर – 35 प्रतिशत

मध्यम लाभ (26–60 प्रतिशत लाभ)– 8 आतुर – 40 प्रतिशत

अलाभ (0–25 प्रतिशत लाभ)– 5 आतुर – 25 प्रतिशत

वे सभी लक्षण जिनमें वात का परोक्ष या अपरोक्ष रूप से कृतित्व है, उनमें रसोन तैल का प्रभाव उत्साहवर्द्धक रहा है। योग अग्निसाम्यकर प्रभाव भी दर्शाता है। इस प्रकार रसोन तैल उक्त व्याधि में अत्यन्त लाभप्रद रहा है।

मौलिक सिद्धांत – 5

आयुर्वेद में मानस प्रकृति की अवधारणा का समीक्षात्मक अध्ययन सात्विक प्रकृति के संबंध में

अध्येता : डा. महेश कुमार शर्मा

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. आशुतोष तिवारी

वर्ष : 1994

आयुर्वेदीय संहिताकारों ने मनोदैहिक प्रकृति विषय विभाजन कर व्यक्तिशः रोगारोग्यपरक विवेचन कर स्वस्थ रहने का उपदेश किया है। यह उपदेश कितने अंशों में सार्थक है, इसका सम्प्रति अध्ययन अपेक्षित है। आयुर्वेद के क्षेत्र में सैद्धान्तिक रूप में मानस दोष, मानस विकार, मेध्य औषधियों का वर्णन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, किन्तु इनका प्रयोग व्यवस्थित रूप में वैद्य समाज में प्रचलित नहीं है। अतः उपर्युक्त विषय शोध कार्य करने के लिए चयनित किया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्त्ता ने चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता आदि ग्रंथों के माध्यम से प्रश्नावली बनाकर 220 व्यक्तियों का चयन कर मानस प्रकृति का अध्ययन किया।

प्राचीन मानस प्रकृति संबंधी आयुर्वेद संहिताओं में प्राप्त विचारों का भली भांति अर्थ ग्रहण कर मूल्यांकन करते हुए तत्तद् लक्षणों के आधार पर प्रश्नावली का निर्माण कर वस्तुनिष्ठ अध्ययन के रूप में मानस प्रकृतियों का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि सात्विक प्रकृति जो कि मानस प्रकृति का एक संवर्ग है। इसकी अवधारणा समाज में आज भी अवस्थित है और इस तरह के मानस भावों से युक्त व्यक्ति पाए जाते हैं।

मौलिक सिद्धांत – 6

आमातिसार (Amoebiasis) में ''पाचनं संग्रहणं देयम्'' (च.चि. 19/15 चक्रपाणि) सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में धान्यपंचक क्वाथ का विश्लेषणात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. लुट्टन लाल अहिरवाल

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 1995

इस शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य ''पाचनं संग्रहणं देयम्'' सिद्धान्तानुसार आमातिसार में धान्यपंचक औषधि का प्रयोग करना है। यह औषधि सुलभ एवं सस्ती तथा हानि रहित होने के साथ–साथ सिद्धान्तानुगम भी है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में कुल 30 आतुरों का चयन कर तीन वर्गों में विभक्त किया गया।

प्रथम वर्ग में धान्यपंचक क्वाथ (चरकसंहिता, चिकित्सास्थान 19/20 एवं भैषज्यरत्नावली, अतिसारचिकित्सा) 2 तोला प्रातः सायं दिया गया।

द्वितीय वर्ग में धान्य पंचक चूर्ण (चरकसंहिता चिकित्सास्थान 19/20 एवं भैषज्यरत्नावली, अतिसारचिकित्सा) 5 ग्राम दिन में 3 बार गर्म कर शीतल किए जल से दिया गया।

तृतीय वर्ग में आमदोषान्तक चूर्ण (घटक – धनिया, सोंठ, बिल्व मज्जा) 5 ग्राम दिन में 3 बार गर्म कर शीतल किए जल से दिया गया ।

औषध प्रयोग अवधि 30 दिन रखी गई।

औषध के परिणाम तीनों वर्गों में निम्नवत् रहे –

प्रथम वर्ग में 60.86 प्रतिशत लाभ रहा।

द्वितीय वर्ग में 44.24 प्रतिशत लाभ रहा।

तृतीय वर्ग में 42.85 प्रतिशत लाभ रहा।

मौलिक सिद्धांत – 7

''निदानदोषदूष्यविशेषेभ्यो विकारविघातभावाभावप्रतिविशेषा भवन्ति'' के परिप्रेक्ष्य में अवसाद रोग का अध्ययन

अध्येता : डा. नित्यानन्द शर्मा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 1995

रोगोत्पादक निदान से अवसाद रोग ही क्यों होता है। इस बात को ''निदानदोषदूष्यविशेषेभ्यो विकारविघातभावाभावप्रतिविशेषा भवन्ति'' सिद्धान्त के माध्यम से इस शोध प्रबन्ध में स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

अवसाद के शमनार्थ एक मात्र शिरोबस्ति का प्रयोग पर्याप्त है या नहीं, इस उद्देश्य को सामने रखते हुए शोध की दृष्टि से प्रयोग किया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में 60 रोगियों का चयन कर तीन वर्गों में विभक्त किया गया ।

प्रथम वर्ग में दशमूल तैल (चरकसंहिता, सूत्रस्थान 4/16/38) की शिरोबस्ति का प्रयोग किया गया।

द्वितीय वर्ग में वचा कैप्सूल (प्रज्ञा कैप्सूल) का दिन में 2 बार गोदुग्ध अनुपान से प्रयोग किया गया ।

तृतीय वर्ग में शिरोबस्ति तथा वचा कैप्सूल का प्रयोग किया गया।

वचा कैप्सूल की मात्रा न्यूनतम 250 मि.ग्रा. एवं अधिकतम 1500 मि.ग्रा. प्रतिदिन दी गई । सर्वाधिक रोगियों में 500 मि.ग्रा. प्रातः एवं सायं दी गई।

प्रयोग अवधि एक माह रखी गई।

प्रत्येक वर्ग में औषध परिणाम निम्नवत् रहा –

प्रथम वर्ग में 42 प्रतिशत लाभ रहा।

द्वितीय वर्ग में 39 प्रतिशत लाभ रहा।

तृतीय वर्ग में 55 प्रतिशत लाभ रहा।

इस प्रकार 60 रोगियों में औसत लाभ 45.3 प्रतिशत रहा।

Maulik Siddhant – 8

A Comparative study of the efficacies of Basti Karma and Agni Karma on Gridhrasi (Sciatica) with special reference to "Pratyekam Sthanadusyadi kriya vaisesyamacharet"

Scholar : Dr. S.R. Santosh

Guide : Prof. B.L. Gaur

Year : 1996

Aims of this study were -

(1) To describe and analyse the principle ''प्रत्येकं स्थान दूष्यादि क्रिया वैशेष्यमाचरेत्'' (च.चि. 28/100)

(2) To understand and explain precisely the above principle.

(3) To study and evaluate the applied aspect of this principle.

(4) To evaluate the clinical efficacy of Basti Karma, Agni Karma on Gridhrasi, on the basis at the above principle.

30 patients were selected and divided into 3 groups A, B & C and managed by Vaitarana Basti (Chakradatta 73/32), Agni Karma & both Basti & Agni Karma respectively.

Period of administration – 30 days

It was found that -

(1) In clinical study the most successful (59.74%) group was group C which was managed by both Basti Karma and Agni Karma i.e. both sthana oriented and dusya oriented approach.

(2) The group A which was managed by the sthana oriented therapy i.e. by Agni Karma was 36.36% successful.

(3) Group B which was managed by the dusya oriented therapy i.e. by Agni Karma was 33.33% successful which was the least successful.

The highest result obtained by group C shows that Caraka's principle is true. But neither Basti Karma nor Agni Karma is a treatment for Gridhrasi roga. In Gridhrasi a multiphase approach of both dosa oriented and sthana oriented treatment is necessary.

मौलिक सिद्धांत – 9

''तस्माच्चिकित्सार्धमिति ब्रुवन्ति सर्वा चिकित्सामपि बस्तिमेके'' सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में रोग एवं दोषानुयायी बस्ति प्रयोग

अध्येता : डा. विष्णु प्रिया मिश्रा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 1997

चिकित्सा के क्रम में बताया है कि रोग में संशोधन, संशमन व निदान त्याग मुख्य चिकित्सा है, इनमें भी संशोधन चिकित्सा को श्रेष्ठ चिकित्सा माना है। संशोधन के अंतर्गत बस्ति कर्म को आधी या संपूर्ण चिकित्सा कहा है। दोष एवं रोगोत्पत्ति में वात दोष प्रधान है, वात के नियन्त्रण से पित्त कफ दोष का नियंत्रण होता है, अतः अध्येता ने इसी सिद्धान्त से प्रेरित होकर इस विषय का चयन शोध प्रबन्ध के लिए किया है।

दोष प्रकोप के शास्त्रोक्त लक्षण समुच्चय के आधार पर वातदोष में 10, पित्तदोष में 9 और कफ दोष में 9 आतुरों का चयन किया गया।

सभी चयनित आतुरों में कुल 8 बस्तियों (आदि व अन्त में अनुवासन बस्ति व मध्य में 3 अनुवासन बस्ति व 3 निरूह बस्ति) का एकान्तर क्रम से निम्नानुसार प्रयोग किया गया –

दोष	निरुह बस्ति द्रव्य (550 मि.लि.)	अनुवासन बस्ति द्रव्य (70 मि.लि.)
वात	दशमूलादि (चरकसंहिता, सिद्धि स्थान 10/19)	दशमूलसिद्ध तैल
पित्त	मंजिष्ठादि (चरकसंहिता, सिद्धि स्थान 10/21)	दशमूलसिद्ध तैल
कफ	पिप्पल्यादि (चरकसंहिता, सिद्धि स्थान 10/24)	दशमूलसिद्ध तैल

लक्षणोपशमन एवं कार्य धातुसाम्य के आधार पर परिणाम मूल्यांकन निम्न प्रकार रहा –

लाभ विवरण	वात दोष	पित्त दोष	कफ दोष
उत्तम लाभ	4 रोगी –40%	– –	1 रोगी –11.11%
मध्यम लाभ	5 रोगी –50%	7 रोगी –77.78%	7 रोगी –77.78%
अल्प लाभ	1 रोगी –10%	2 रोगी –22.22%	1 रोगी –11.11%
अलाभ	– –	– –	– –

इससे स्पष्ट होता है कि बस्ति अपना प्रभाव तो प्रदर्शित करती है किन्तु यदि रोग के हेतु के अनुरूप सम्प्राप्ति विघटन पूर्वक चिकित्सा की जाए तो अधिक लाभ प्राप्त होता है।

मौलिक सिद्धांत – 10

''रक्तजांस्तान् विभावयेत्'' सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में आमवात रोग पर रक्तशोधकावलेह का विश्लेषणपरक अध्ययन

अध्येता : डा. प्रेम दाधीच

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 1997

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का उद्देश्य आमवात जैसी जीर्ण व जटिल व्याधि में आचार्य चरक द्वारा दिए गए सिद्धान्त ''रक्तजांस्तान् विभावयेत्'' की पुष्टि तथा ऐसी औषध का चयन करना है, जिससे आमवात व्याधि का समूल नाश संभव हो।

वर्ग 'अ' में 15 रोगियों में रक्तशोधकावलेह (लक्ष्मीमोदतरंगिणी, जीर्ण आमवात) 10 ग्राम दिन में 2 बार उष्ण जल अनुपान के साथ सेवन कराया गया।

वर्ग 'ब' में 15 रोगियों में उपरोक्त औषध को दशमूल क्वाथ के अनुपान के साथ सेवन कराया गया।

औषध प्रयोग अवधि 2 माह रखी गई।

वर्ग 'अ' में सांख्यिकीय गणना के आधार पर परिणाम असार्थक रहे, तथा वर्ग 'ब' में भी सांख्यिकीय गणना के आधार पर परिणाम असार्थक रहे।

उष्ण जल के अनुपान से औषध सेवन की अपेक्षा दशमूल क्वाथ के अनुपान से औषध सेवन करने वाले आतुरों में लाभ अधिक रहा।

मौलिक सिद्धांत – 11

अष्टांगसंग्रह एवं अष्टांगहृदय सूत्रस्थान का तुलनात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. मदन मोहन पाराशर

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 1997

अष्टांगसंग्रह एवं अष्टांगहृदय से पूर्व के सभी तंत्रों में प्रतिपाद्य विषय को विशद करने वाले वचन भी ग्रन्थबद्ध नहीं किए गए हैं। अनावश्यक विवेचन, आक्षेप, पुनरूक्ति दोषों से रहित, रोगों के हेतु, लिंग एवं औषध इन तीन आयुर्वेद के स्कन्धों का ग्रन्थन करना तथा आयुर्वेद के अष्टांग के सार संग्रह के कारण प्रत्येक अंग को बल और जीवन देने वाले इन दोनों ग्रन्थों (अष्टांगसंग्रह एवं हृदय) का तुलनात्मक अध्ययन कर इन ग्रन्थों के सूत्रस्थान में साम्य एवं वैषम्य को स्पष्ट करने का प्रयास करना विषय चयन का उद्देश्य है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में दोनों ग्रन्थों के ऐतिह्य विवेचन को स्पष्ट करते हुए ग्रन्थकार का परिचय एवं सूत्रस्थान में उपलब्ध आयुर्वेदीय सिद्धान्तों का संक्षिप्त उल्लेख किया गया है तथा दोनों ग्रन्थों के सूत्र स्थान में अध्यायों की संख्या, अध्यायगत सूत्रों की संख्या एवं उनका औचित्य तथा विषय वस्तु का संक्षिप्त परिचय देते हुए अष्टांगसंग्रह एवं हृदय के सूत्रस्थान के सभी अध्यायों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए समानता को आयुर्वेद अष्टांग की दृष्टि से विभाजित कर उन्हें अकारादि क्रम में लिखा गया है।

अष्टांगसंग्रह एवं अष्टांगहृदय के सूत्रस्थान का अध्ययन करने के उपरांत निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए –

अष्टांगसंग्रह एवं अष्टांगहृदय के काल में लगभग 1400 वर्ष का अन्तर है, अष्टांगसंग्रह के रचनाकार वृद्ध वाग्भट हैं और उन्हीं के वंशज पौत्र वाग्भट हुए, जिन्होंने अपने दादा के ग्रन्थ को आधार बनाकर अष्टांग हृदय की रचना की।

Maulik Siddhant – 12

Aesthetic in Ayurveda and Personality damaging factors with special reference to Prabha to enrich the Principle

Scholar : Dr. Trupti R. Singh

Guide : Prof. B.L. Gaur

Year : 1998

Aims of this study were :

(1) To study the concept of Aesthetics as a science with historical background, ayurvedic texts and allied books.

(2) To study the concept of personality with modern as well as ayurvedic aspects.

(3) To assess the efficacy and mode of action of Varnya Mahakashaya in Prabha.

Researchwork has been completed in two parts namely.

1- Literary work : Planned to review all ayurvedic texts and allied literature with modern literature.

2- Clinical study : Group A : Internal medicine Varnya Mahakashaya in the form of kwatha (Charak samhita, Sutra

4/10) 20 ml twice a day. The treatment was given upto 5 weeks.

Group B : Internal and external medicine Varnya Mahakashaya in the form kwatha and as well as lepa.

In 'A' group treated with internal medicine 58.33% patients were markedly improved and 25% patients were improved, only 2 patients remained unchanged.

In 'B' group treated with internal and external medicine 23.07% patients were cured, 38.48% patients were markedly improved, 38.48% patients were improved.

Overall satisfactory results were obtained.

मौलिक सिद्धांत – 13

प्राचीन ग्रन्थों में उल्लिखित मन एवं मानसरोगों का विवेचनात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. कमल चन्द शर्मा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 1998

मानस विवेचन को संहिताओं की दृष्टि से पूर्ण रूपेण विवेचित तथा वर्णित करना तथा उसका आधुनिक साहित्य से समन्वय करते हुए विषय को युगानुरूप संदर्भ में व्याख्यायित करना अध्येता का उद्देश्य रहा है।

संस्कृत वाङ्मय से मानस संबंधित समस्त विषयों को संग्रहित करके आयुर्वेदीय संहिता ग्रन्थों में वर्णित मानस विषयक ज्ञान का सांगोपांग वर्णन करना तथा उसको युगानुरूप संदर्भ में प्रस्तुत करना इस शोध कार्य की मुख्य कार्य योजना रही।

मन विषयक लगभग सम्पूर्ण विषय वस्तु इस शोध प्रबन्ध में एकत्रित की गई है। न्यूनाधिक 60 मानस रोगों का विवेचन भी उपलब्ध हुआ।

विभिन्न संहिताकारों, शास्त्रकारों तथा दर्शनों के मतानुसार ''मन'' क्या है? इस विषय को सफलता पूर्वक शोध प्रबन्ध में संयोजित किया गया तथा मन संबंधी वर्णन का आधुनिक विज्ञान सम्मत विवेचन भी प्रस्तुत किया गया।

मौलिक सिद्धांत – 14

हेतु व्याधिविपरीत सिद्धान्तानुरूप मधुमेह रोग पर मधुमेहारि चूर्ण का प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. सविता

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. आशुतोष तिवारी

वर्ष : 1998

शोध महानिबन्ध हेतु विषय चयन रोग की असाध्यता, मारकता एवं व्यापकता को दृष्टिगत रखते हुए किया है तथा प्रयत्न किया गया है कि एक ऐसी औषधि को विकसित किया जावे, जो कि सभी प्रकार से रोग निर्मूलक, रोग नियंत्रक हो तथा दुष्प्रभाव जनक न हो, औषधि सर्वत्र सुलभ हो एवं अल्प व्यय साध्य हो।

सर्वप्रथम संहिताओं के आधार पर चिकित्सा सिद्धान्तों की अवधारणा मधुमेह के संदर्भ में की गई, पश्चात् रोगियों का चयन लाक्षणिक एवं जैव रासायनिक परीक्षा के आधार पर किया गया। चयनित 25 रोगियों पर मधुमेहारि चूर्ण (कल्पित योग, घटक द्रव्य – 1. गुड़मार 2. करेला 3. आम्रमज्जा 4. बिल्वपत्र 5. सनाय 6. बला 7. निम्ब फलमज्जा 8. जम्बूमज्जा 9. बबूलफली 10. सौंफ 11. सौंठ 12. मैथी – समभाग) का प्रयोग प्रत्येक वयस्क रोगी को रोग एवं रोगी की प्रकृति के अनुसार 3–5

ग्राम मात्रा में प्रातः एवं सायंकाल भोजनोत्तर कोष्ण जल से करवाया गया तथा रोगी को औषधि 2 माह तक प्रयोग करवाई गई।

मधुमेह व्याधि पर मधुमेहारि चूर्ण का प्रायोगिक अध्ययन कर उससे प्राप्त परिणामों का निष्कर्ष निम्न प्रकार रहा –

मधुमेहारि चूर्ण नामक योग दोष, दूष्य सम्मूर्च्छना विघटन में पूर्णतः कार्मुक रहा। योग में प्रयुक्त घटकों ने सम्मिलित रूप में तो व्याधि के लक्षणों का उपशमन किया, साथ ही पृथक्–2 घटकों ने भी अपने कर्म के अनुरूप लाभ प्रदान किया।

इस शोध कार्य में 25 रोगियों में से 5 रोगियों को 100 प्रतिशत लाभ मिला तथा 5 रोगियों को 80–87 प्रतिशत लाभ मिला तथा 7 रोगियों को 70–80 प्रतिशत लाभ मिला एवं 6 रोगियों को 60–70 प्रतिशत लाभ मिला तथा 2 रोगियों को बहुत कम क्रमशः 25 प्रतिशत तथा 12.22 प्रतिशत लाभ प्राप्त हुआ।

मौलिक सिद्धांत – 15

''यत्किंचित् कफवातघ्नं.....'' (च.चि. 17/147) सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ शट्यादि चूर्ण का अनूर्जताजन्य तमक श्वास के परिप्रेक्ष्य में सैद्धान्तिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. निशा गुप्ता

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 1999

विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों में बढ़ते हुए औद्योगिकीकरण से उत्पन्न दूषित वातावरण के फलस्वरूप नवीन रोग अनूर्जताजन्य श्वास (Allergic Asthma) प्रचलन में आया जो कि वर्तमान में बच्चों से लेकर वृद्धों तक सम्पूर्ण मानव जाति को आक्रान्त कर रहा है। अनूर्जताजन्य

श्वास के प्रमुख उत्पादक – वातावरण प्रदूषण एवं न्यून व्याधि क्षमत्व हैं। अतः इस रोग पर शोध कार्य के साथ ही व्याधि क्षमत्व को भी मुख्य विषय वस्तु बनाया है। उक्त रोग पर शट्यादि चूर्ण की उपयोगिता कितनी कारगर हो सकती है यह शोध का उद्देश्य रहा है।

अनुसन्धानार्थ 20 रोगियों का चयन किया गया जिनके चयन के मापदण्ड निम्नलिखित रहे हैं। (अ) लक्षण समुच्चय (ब) प्रयोगशालीय परीक्षण (3) क्ष–किरण परीक्षा। रोगी चयन के बाद शट्यादि चूर्ण (चरक संहिता, चिकित्सास्थान 17/123–124) का 10–10 ग्राम प्रातः एवं सायंकाल उष्ण दूध से 30 दिन तक प्रयोग कराया गया।

20 प्रतिशत आतुरों को उत्तम लाभ हुआ एवं शेष 80 प्रतिशत आतुरों में मध्यम लाभ प्राप्त हुआ।

मौलिक सिद्धांत – 16

बहिः परिमार्जन क्रम में प्रदेह प्रयोग एक सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक विश्लेषण

अध्येता : डा. निशि चावला

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 1999

वर्तमान युग में पर्यावरण प्रदूषण एवं स्वस्थवृत्तोक्त विधियों का पालन न करने के कारण त्वग्विकारों की उत्पत्ति भी अनेक श्रुत एवं अश्रुत पूर्व व्याधियों के रूप में देखी जा रही है। ऐसी स्थिति में अन्तःपरिमार्जन के सम्यक् प्रयोगान्तर बहिःपरिमार्जन के रूप में प्रदेह, लेप आदि के प्रयोग से कुष्ठादि रोगों की निवृत्ति सरलता से होती हे। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर अध्येत्री ने चरक द्वारा वर्णित बहिःपरिमार्जन क्रम में प्रदेह प्रयोग के अन्तर्गत तुत्थादि प्रदेह का विचर्चिका में प्रयोग हेतु महानिबन्ध का विषय चयनित किया है।

अनुसंधान हेतु 30 विचर्चिका रोगियों का चयन कर एक ही समूह में रखा गया तथा सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ तुत्थादि प्रदेह (चरकसंहिता, सूत्रस्थान 3/12) का बाह्य प्रयोग यथावश्यक मात्रा में 4 सप्ताह तक कराकर परिणाम का अध्ययन किया गया। लाभालाभ का साप्ताहिक विवरण प्राप्त किया गया। रोग निदान हेतु संहितोक्त लक्षणों को ही आधार बनाया गया।

30 रोगियों में से 20 रोगियों में चिकित्सा पश्चात् सभी लक्षणों का उपशमन पाया गया तथा शेष 10 रोगियों में सभी लक्षणों का उपशमन नहीं हो सका। इस प्रकार औसत लाभ 80 प्रतिशत रहा।

मौलिक सिद्धांत – 17

''यथादोषं प्रकुर्वीत भैषज्यं पाण्डुरोगिणाम्'' च.चि. 16/123 सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ कफज पाण्डुरोग के परिप्रेक्ष्य में नवीन कल्पनापरक गोमूत्र हरीतकी का चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. रेखा दाधीच

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. बलदेव कुमार

वर्ष : 2001

भारत जैसे आर्थिक रूप से दुर्बल देश में अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित होने से, संतुलित आहार विहार न प्राप्त होने से धातु निर्माण प्रक्रिया संबंधी विसंगतियाँ व कुपोषण जन्य व्याधियों में पाण्डु रोग सर्वोपरि है। पाण्डु रोग वस्तुतः मध्यम व निम्न वर्ग में ही अधिक देखने को मिलता है, अतः ऐसी औषधि जो दुष्परिणामकर न हो, सर्वसुलभ, अल्प मूल्य एवं विभिन्न वय के रोगियों के लिए लाभकारी हो। इस दृष्टि से महानिबन्ध का विषय चयनित किया गया है।

45 रोगियों का चयन कर 3 वर्ग बनाए गए।

वर्ग अ – 15 रोगी–गोमूत्र हरीतकी (च.चि. 16/68) अर्क का 20 मि.लि. मात्रा में प्रातः, सायं 21 दिन तक प्रयोग कराया।

वर्ग ब – 15 रोगी–गोमूत्र हरीतकी वटी का 2 ग्राम मात्रा में प्रातः, सायं 21 दिन तक प्रयोग कराया।

वर्ग स – 15 रोगी–गोमूत्र हरीतकी अर्क व गोमूत्र हरीतकी वटी का प्रातः, सायं 21 दिन तक प्रयोग कराया।

औषध प्रयोग के पश्चात् लाभ प्रतिशत निम्न प्रकार रहा –

वर्ग 'अ' में लाभ – 27 प्रतिशत

वर्ग 'ब' में लाभ – 32 प्रतिशत

वर्ग 'स' में लाभ – 35 प्रतिशत

गोमूत्र हरीतकी अर्क व वटी में, वटी ही अधिक कार्यकारी पाई गई, संभवतः द्रव्यों के कुछ तत्वों के जल विलेय, कुछ तत्वों के स्नेह विलेय, कुछ तत्वों के सुरा विलेय व कुछ के सार विलेय होने से, अतः अर्क कल्पना की अपेक्षा संपूर्णावयवा हरीतकी प्रयोग अधिक लाभकारी रहा।

मौलिक सिद्धांत – 18

''स्रोतः सु च विशुद्धेषु चरत्यविहतोऽनिलः'' के परिप्रेक्ष्य में तमक श्वास में मनःशिलादि धूमपान का चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. राजेन्द्र सिंह मीणा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. केदार लाल मीणा

वर्ष : 2001

शरीरस्थ वायु महाभूत का पोषण प्रकृतिस्थ वायु (प्राणवायु) द्वारा होता है। इस क्रिया में अवरोध होने पर श्वास रोग जैसी घातक व्याधि उत्पन्न होती है।

वर्तमान समय में बढ़ते हुए औद्योगिकीकरण, कारखानों व अन्य कारणों से उत्पन्न धुआँ, धूलिकण आदि के कारण प्रकृतिस्थ वायु प्रदूषित होकर श्वास रोगियों की संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। दिनचर्या, ऋतुचर्या की अवहेलना करने से अधिकांश व्यक्ति अग्निमांद्य एवं आमोत्पन्न व्याधियों से ग्रसित हो रहे हैं, जैसे श्वास, जिसकी प्रभावशाली चिकित्सा आवश्यक है। आशुकारी, तत्काल प्रभावी एवं स्थानिक सम्पोषण करने वाली औषध मनःशिलादि धूमपान का चयन अध्येता ने तमक श्वास व्याधि में किया है।

प्रयोग दृष्ट्या 30 रूग्णों का निम्न प्रकार अध्ययन किया गया

वर्ग अ – सहौषध धूमपान – 15 रूग्ण

वर्ग ब – निरौषध धूमपान – 15 रूग्ण

औषध योजना – मनःशिलादि धूम (सुश्रुत उ. 51/50)

प्रयोग अवधि – 30 दिन

सेवन काल – 3 कालों का चयन किया गया –

1. प्रातः काल
2. दिवाशयन के बाद
3. वेग काल में

शोधकार्य समाप्ति पर औषध परिणाम विवेचन निम्नवत् रहा–

		वर्ग अ	**वर्ग ब**
अल्पलाभ । अलाभ	(0 – 25 प्रतिशत)	0 प्रतिशत	0 प्रतिशत
मध्यम लाभ	(26 – 74 प्रतिशत)	46.7 प्रतिशत	93.3 प्रतिशत
उत्तम लाभ	(75 – 100 प्रतिशत)	53.3 प्रतिशत	6.7 प्रतिशत

मनःशिलादि धूमपान का संहिता निर्दिष्ट प्रक्रियाओं के अनुसार सेवन करवाकर अध्येता ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि आयुर्वेदीय धूमपान चिकित्सा का अपना एक महत्व है, इस चिकित्सा से रोगियों को यथावश्यक एवं अल्प व्यय में अधिक लाभ पहुंचाया जा सकता है।

मौलिक सिद्धांत – 19

''समानगुणाभ्यासो हि धातूनां वृद्धिकारणम्'' सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ अस्थिक्षयज विकारों में ''बस्तयः क्षीरसर्पीषि तिक्तकोपहितानि च'' सूत्र का समीक्षात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. पुष्पेन्द्र कुमार शर्मा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2001

अस्थि क्षय से जायमान विकारों में सर्वाधिक स्पष्ट एवं व्यक्त चिन्ह केश प्रपतन ही है। केशप्रपतन आज के युग में एक अभिशाप की भांति मानव को ग्रसित कर रहा है। युग प्रभाव के कारण प्रत्येक व्यक्ति केशों को अपना अलंकार मानकर उनके संरक्षण के प्रति अतिप्रयत्नशील है फिर भी केशप्रपतन समस्या का निवारण नही होता। अतः सामान्य–विशेष के धातु वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में इस गंभीर समस्या के चिंतन एवं निवारण के उद्देश्यार्थ ही अध्येता ने इस विषय का चयन किया है।

अस्थिक्षयज विकार केशशातन के 20 रोगियों का चयन कर दो वर्ग 'क' एवं 'ख' निर्मित कर योग प्रभाव का आकलन किया गया।

क वर्ग – अनुवासन प्रयोगार्थ स्नेह च.सि. 10/43 में वर्णित घटक द्रव्यों द्वारा निर्मित तिक्तकोपहित घृत

मात्रा – 1½ पल (60 मि.लि.), सैन्धव + सौंफ – 2 ग्राम ।

प्रति रोगी अनुवासन बस्ति – 10

प्रति रोगी निरूहण बस्ति – 6

अवधि – 34 दिन

ख वर्ग – चयनित रूग्णों पर तिक्तकोपहित क्षीरसर्पि का स्नेहौषध के रूप में प्रयोग किया गया।

मात्रा : 2 कर्ष (20 मि.लि.) – 10 मि.लि. प्रातः, 10 मि.लि. सायं दूध के साथ,

पथ्य : उष्ण जल

शोध कार्य समाप्ति पर परिणाम निम्नवत् रहा –

	वर्ग 'क' रूग्ण संख्या	**प्रतिशत**	**वर्ग 'ख' रूग्ण संख्या**	**प्रतिशत**
उत्तम लाभ	5	50 प्रतिशत	2	20 प्रतिशत
मध्यम लाभ	4	40 प्रतिशत	6	60 प्रतिशत
अल्प लाभ	1	10 प्रतिशत	1	10 प्रतिशत
अलाभ	0	0 प्रतिशत	1	10 प्रतिशत

केशशातन विकार में प्रतिशत अनुसार लाभ : वर्ग 'क' 86.95 प्रतिशत, वर्ग 'ख' 75 प्रतिशत, उभयवर्गीय 81.39 प्रतिशत।

'क' वर्ग रूग्णों में लाभ 71.05 प्रतिशत ($t = 3.65$ $p > 0.1$), परिणाम सार्थक रहा।

'ख' वर्ग में लाभ 57.40 प्रतिशत ($t = 3.35$ $p < 0.5$), परिणाम मध्यम श्रेणी में सार्थक रहा।

इस प्रकार केशशातन, अस्थि प्रदोषज विकारों में बस्ति, सर्पि से अधिक कार्मुक है।

मौलिक सिद्धांत – 20

''अपानेनावृते सर्वं दीपनं ग्राहि भेषजम् । वातानुलोमनं यच्चः ।।'' सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ कफावृतापान (आमातिसार) में धान्यकादि क्वाथ का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक विवेचन

अध्येता : डा. महेन्द्र कुमार जैन

निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2001

अग्नि के साथ–साथ वायु के आवरणों विशेषतः कफावृतापान जिसका कि साम्य आमातिसार से है, को विशद रूप में प्रायोगिक दृष्टि से अध्ययन करने हेतु विषय चयनित किया गया है।

अध्येता ने प्रायोगिक अध्ययन हेतु 20 रोगियों पर चिकित्सा प्रयुक्त की है। औषध योग–धान्यकादि क्वाथ (भैषज्यरत्नावली 8/7)

– क्वाथ निर्माण में शार्ङ्ग.धरसंहिता का अनुकरण किया है

– क्वाथ देने का समय – भोजन के पूर्व

मात्रा – लाभालाभ को दृष्टिगत रखते हुए एवं रोगी के सत्व को बुद्धिस्थ कर चक्रदत्त सम्मत अवर मात्रा को लिया गया।

औषध मात्रा – 2 तोला, भोजन के पूर्व दिन में दो बार

प्रयोग अवधि – 1 माह

अधिकृत 20 रोगियों में धान्यकादि क्वाथ का 59.07 प्रतिशत लाभ अंकित किया गया ।

अध्येता शोध प्रबन्ध के माध्यम से इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि चरकोक्त तीन उपक्रम दीपन, ग्राही, वातानुलोमन को अनुक्रम प्राप्त चिकित्सा सूत्र के रूप में स्वीकार करना ही आमातिसार की अभीष्ट चिकित्सा है। अग्नि समीचीन हो एतदर्थ दीपन, शरीर के बहिर्मुख स्रोतस् से प्रवर्तमान मलादि की भी अति प्रवृति न हो एतदर्थ ग्राहि तथा अपान वायु का अनुलोमन होता रहे, एतदर्थ वातानुलोमन।

मौलिक सिद्धांत – 21

''भेषजैः साध्ययाप्यांस्तु क्षिप्रं भिषगुपचारेत्'' (च.चि. 17/69) सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ श्रृंग्यादि चूर्ण का तमक श्वास के परिप्रेक्ष्य में सैद्धान्तिक एवं चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. विष्णु दत्त जोशी

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. केदार लाल मीणा

वर्ष : 2001

तमक श्वास की उत्पत्ति में ''कफवातात्मकावेतौ पित्तस्थान समुद्भवौ'' माना है, अतः तमक श्वास की चिकित्सा में कफवातशामक एवं वातानुलोमक औषध योगों का प्रयोग प्रशस्त होता है तथा चूर्ण को क्वाथ अनुपान से लेने पर कर्मात्मक प्रभाव शीघ्र होता है, इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु योग का चयन किया गया है।

प्रायोगिक अध्ययन में 30 रोगियों का चयन लक्षणों के आधार पर किया गया तथा रोगियों के 2 वर्ग बनाए गए।

वर्ग अ–15 रोगी – श्रृंग्यादि चूर्ण (चक्रदत्त 12/15) 3 ग्राम, अमृतादि क्वाथ (चक्रदत्त 12/15) 20 मि.लि. अनुपान के साथ दिन में 3 बार ।

वर्ग ब–15 रोगी–श्रृंग्यादि चूर्ण 3 ग्राम सुखोष्ण जल से दिन में तीन बार।

प्रयोग अवधि – 1 माह

वर्ग अ के आतुरों में – उत्तम लाभ – 53.3 प्रतिशत
मध्यम लाभ – 46.7 प्रतिशत

वर्ग ब के आतुरों में – उत्तम लाभ – 36.66 प्रतिशत
मध्यम लाभ – 63.33 प्रतिशत

अध्येता द्वारा प्राप्त परिणाम के अनुसार तमक श्वास में वेगकालीन उग्रता के समय उत्पन्न लक्षणों में निश्चित रूप से लाभ प्राप्त हुआ। पूर्णतः तमक श्वास का शमन नहीं हो पाया। अतः आतुरों को निर्देश दिया कि पुनः पुनः श्वास वेग आने पर उत्पन्न लक्षणों के उपशमन हेतु औषध सेवन करें।

मौलिक सिद्धांत – 22

''तेषां क्षय वृद्धी शोणित निमित्ते'' सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ रसप्रदोषज विकार ''क्लैब्य'' के परिप्रेक्ष्य में बल्य महाकषाय प्रयोग–एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. मदन लाल सैनी

निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2002

अध्येता ने सिद्धान्त वचन ''तेषां क्षय वृद्धी शोणित निमित्ते'' को लक्ष्य कर रसादि शुक्रान्त धातु पोषण क्रम के द्वारा अंतिम शुक्र धातु के पोषणार्थ बल्य महाकषाय को ग्रहण करने हेतु रूचिकारक कल्पना में प्रयोग कर इसकी कार्मुकता को निर्धारित करने का लक्ष्य रखा है।

अध्ययनार्थ चयनित 40 रोगियों के दो वर्ग बनाए गए ।

औषध – बल्य महाकषाय (चरकसंहिता, सूत्रस्थान 4/10) घन वटी।

सभी 10 घटक द्रव्यों को एक साथ समान मात्रा में मिलाकर शार्ङ्गधर संहितानुसार क्वाथ निर्माण कर पुनः मन्द–मन्द अग्नि पर पाककर घन निर्माण किया। घन को शुष्क कर चूर्ण बनाकर कैप्सूल में भर कर रोगी पर प्रयुक्त किया।

1. एक वर्ग को घन वटी की कुल मात्रा 3 ग्राम प्रातः सायं विभक्त कर दुग्ध अनुपान से 2 माह तक दी गई।
2. दूसरे वर्ग में घन वटी की कुल मात्रा 6 ग्राम प्रातः, मध्यान्ह व सायं विभक्त कर दुग्ध अनुपान से 1 माह तक दी गई।

अधिगृहीत 40 रोगियों में बल्य महाकषाय घन वटी का 59.80 प्रतिशत लाभ अंकित किया गया। विभिन्न लक्षणों पर भी लाभ प्रतिशत काफी उत्साहजनक रहा।

मौलिक सिद्धांत – 23

''श्लेष्मलाया कटुप्रायाः समूत्रा बस्तयो हिताः'' (च.चि. 30/85) सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ श्लेष्मला योनि व्यापद् रोग परिप्रेक्ष्य में गोमूत्र युक्त त्रिफला क्वाथ की उत्तरबस्ति एवं उदुम्बरादि तैल पिचु धारण का चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. निधि भट्ट

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. बलदेव कुमार

वर्ष : 2002

श्लेष्मला योनिरोग समाज की हर वर्ग कि स्त्रियों में पाई जाने वाली एक समस्या है। इस बहुतायत से मिलने वाली व्याधि के उपचार एवं उससे बचने के उपायों में जन कल्याण की भावना से एवं स्त्रियों के स्वास्थ्य उन्नयन की दृष्टि से इस व्याधि के निवारणार्थ स्तम्भक, शोथहर, शूलप्रशमन व स्थानीय व्रण शोधक एवं रोपण करने वाले उदुम्बरादि तैल एवं गोमूत्र युक्त त्रिफला क्वाथ की उत्तर बस्ति का शोध कार्य हेतु चयन किया गया है।

श्लेष्मला योनिव्यापद से ग्रसित 45 आतुरों का चयन आयुर्वेद व शास्त्रों में वर्णित लक्षण के आधार पर करके तीन वर्गों में विभाजित किया –

वर्ग अ – उदुम्बरादि तैल (चरकसंहिता, चिकित्सास्थान 30/73–76) का प्रयोग – 5 मि.लि. मात्रा में रात्रि में पिचु धारणार्थ ।

वर्ग ब – गोमूत्र युक्त त्रिफला क्वाथ की उत्तर बस्ति 200–300 मि.लि. मात्रा में ।

वर्ग स – उदुम्बरादि तैल एवं गोमूत्र युक्त त्रिफला क्वाथ की उत्तर बस्ति का प्रयोग ।

प्रयोग काल – 7 दिन

औषध की कार्मुकता निम्न प्रकार रही –

	लक्षण	कार्मुकता		
		वर्ग अ	वर्ग ब	वर्ग स
1.	जलीय श्वेतस्राव	46 प्रतिशत	33 प्रतिशत	66 प्रतिशत
2.	पिच्छिल स्राव, कंडू	50 प्रतिशत	66 प्रतिशत	75 प्रतिशत
3.	योनि में अल्प वेदना	70 प्रतिशत	40 प्रतिशत	40 प्रतिशत
4.	कटि शूल	37 प्रतिशत	50 प्रतिशत	62 प्रतिशत
	औसत	36 प्रतिशत	40 प्रतिशत	46 प्रतिशत

उदुम्बरादि तैल के घटक कफ दोष का शमन करते हैं तथा तैल वात का शमन करता है। त्रिफला गोमूत्र बस्ति कफ वात शामक है। इनके प्रयोग से श्लेष्मला योनिव्यापद् में अधिक लाभ मिलता है।

Maulik Siddhant – 24

Learning Methodology in Ayurveda a critical review in context of Modern Era.

Scholar : Dr. Asit Kumar Panja

Guide : Prof. B.L. Gaur

Co-Guide : Dr. Baldev Kumar

Year : 2002

The object of this study is to develop a critical view on teaching & learning methodology in ayurvedic literature in the light of modern methods of learning.

Literary research is carried out and planned to review all ayurvedic texts and allied literature with modern literature to develop the critical view of learning methodology.

It was found that multi disciplinary approach is necessary to establish the principle methods, one has to employ to support the existing ideas and not to replace them.

Teaching must be simplified. Different instructional media can make it easy.

Maulik Siddhant – 25

Comparative study of Charak's Dietary principles with Modern Dietetics

Scholar : Dr. Ajay Nawale

Guide : Prof. B.L. Gaur

Co-Guide : Dr. Baldev Kumar

Year : 2002

The aim is to compare the ancient wisdom from Charaka Samhita with its modern counterpart. So as to provide a better approach towards. This science of food, which is closely related to our health and day to day life.

Literary research is planned to review all ayurvedic texts and allied literature with modern literature.

It was found that dietetics is a science that deals with the adequacy of diet during normal life and modified required during disease condition.

Therefore we can say that there is no basic difference in concept of diet therapy. The difference is within the nature of medicine and different dietary preparation.

मौलिक सिद्धांत – 26

''व्याधि प्रत्यनीक'' सिद्धान्तानुक्रम में सोरियासिस त्वक् रोग पर सोमराजी चूर्ण एवं सोमराजी तैल का सैद्धान्तिक एवं चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. भंवर लाल जाटोलिया

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. आशुतोष तिवारी

वर्ष : 2002

सोरियासिस के कारणत्व को ज्ञात करने के लिए एवं रोग प्रतिकार करने के लिए इस विषय का चयन किया गया है। सोरियासिस रोग पर अद्यतन प्राप्त अध्ययन और तत्समान लाक्षणिक आधारों पर तुलनात्मक अध्ययन कुष्ठ रोग के संदर्भ में किया गया है। कुष्ठ रोग का आयुर्वेदीय वाङ्मय में प्राप्त वर्णन अतिविस्तृत और जटिल है, इस कारण अभी तक अष्टादश कुष्ठ रोगों का मानकीकरण भी नहीं किया जा सका है।

अध्ययन क्रम में रोगियों का दो प्रकार से चयन किया गया है –

वर्ग अ – औषध वर्ग समूह – 10 रोगी

वर्ग ब – नियंत्रण वर्ग सूमह – 7 रोगी

प्रत्येक वर्ग में रोगियों की श्रेणी का निर्धारण वयानुसार किया गया । औषधि चयन रोग की दोष – दूष्यात्मक विकृति को केन्द्र में रखकर किया गया है।

औषध योग व मात्रा – सोमराजी चूर्ण (चक्रदत्त 50/54) 4–4 ग्राम दिन में चार बार आभ्यंतर प्रयोग

अनुपान – कोष्ण जल

सोमराजी तैल (चक्रदत्त 50/163–165) – आवश्यकतानुसार बाह्य प्रयोगार्थ

प्रयोग अवधि – 45 दिन

सोरियासिस रोग पर इस औषध योग की कार्मुकता 36.38 प्रतिशत रही जो यह सिद्ध करती है कि प्राचीन काल में बनाए गए योग आज भी उपयोगी हैं और असाध्य व्याधियों पर उनकी कार्मुकता सिद्ध करने में सक्षम है। इसी प्रकार वर्ग – ब में परिणाम 3.39 प्रतिशत रहा जो औषध वर्ग की अपेक्षा नगण्य है।

मौलिक सिद्धांत – 27

''क्रिया कफघ्नी कफमर्मरोगे'' (च.चि. 26/96) सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ उदुम्बरादि लेह सगुग्गुलु का कफज हृद्रोग के परिप्रेक्ष्य में (धमनी–काठिन्य के सन्दर्भ में) सैद्धान्तिक एवं चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. देवेन्द्र सिंह चाहर

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2002

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में उदुम्बरादि लेह एवं उदुम्बरादि लेह सगुग्गुलु का कफज हृद्रोग में मूल्यांकन करना ही मुख्य उद्देश्य है और इसकी पुष्टि चिकित्सकीय अध्ययन के माध्यम से ही संभव है। कफज हृद्रोग में कफ की विकृति होती है, इससे शरीर को हानि की सम्भावना अधिक होती है। अतः ''क्रिया कफघ्नी कफमर्मरोगे'' सिद्धान्तानुसार इसमें दीपन, पाचन, वातानुलोमन, लेखन व हृद्य औषध देते हैं । उदुम्बरादि लेह सगुग्गुलु में प्रयुक्त औषधियाँ उष्ण जलानुपान से देने पर जो कि मुख्य औषधि की क्रिया शक्ति में सहायक है, कफज हृद्रोग में शीघ्र लाभ प्रदान करती है, अतः इस योग का चयन किया गया है।

आतुर चयन के मापदण्डों को ध्यान में रखते हुए सभी परीक्षणों के उपरांत चिकित्सा हेतु उपयुक्त पाए गए रोगियों को दो वर्गों में विभाजित कर औषध प्रयोग कराया गया।

प्रथम वर्ग 'अ' – 10 आतुर [उदुम्बरादि लेह (च.चि. 26/98) + उष्ण जलानुपान]

द्वितीय वर्ग 'ब' – 15 आतुर (उदुम्बरादि लेह सगुग्गुलु + उष्ण जलानुपान)

औषध मात्रा – अवलेह – 10 ग्राम दिन में 2 बार भोजन के बाद

गुग्गुलु – 2 वटी (1 ग्राम) दिन में 3 बार भोजन के बाद

प्रयोग अवधि – 3 माह (दोनों समूहों में)

वर्ग 'अ' एवं वर्ग 'ब' में लाभ प्रतिशत लक्षणानुसार निम्न प्रकार रहा –

	वर्ग अ	**वर्ग ब**
Total lipid	2.11%	0.09%
HDL	0.88%	0.77%
LDL	2.22%	4.47%
VLDL	6%	7.28%
Serum cholestrol	3.42%	3.42%
Serum triglyceride	5%	4.77%

परिणामों को सांख्यिकीय आधार पर गणना करने से निम्नलिखित तथ्य प्राप्त हुए –

- हृदयरोग के हेतुओं के साथ–साथ कफ प्रकोपक हेतुओं का भी लगातार सेवन करने से कफज हृद्रोग की उत्पत्ति होती है।
- निदान एवं सम्प्राप्ति के आधार पर आधुनिकोक्त धमनी काठिन्य का कफज हृद्रोग में अंतर्भाव किया गया।
- उदुम्बरादि लेह सगुग्गुलु कफज हृद्रोग के लक्षणों को शांत करने में उदुम्बरादि लेह की अपेक्षा ज्यादा श्रेष्ठ है।
- रक्तचाप के परिणाम मूल्यांकन एवं प्रयोगशालीय परीक्षणों के आधार पर भी उदुम्बरादि लेह सगुग्गुलु के परिणाम अधिक लाभदायक रहे हैं।

मौलिक सिद्धांत – 28

चरकोक्त स्वस्थचतुष्क का समीक्षात्मक अध्ययन एवं युगानुरूप संदर्भ में अपेक्षायें

अध्येता : डा. विनोद कुमार लवानियां

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2002

महानिबन्ध के विषय चयन के उद्देश्य हैं–

- स्वस्थचतुष्कोक्त विषयों का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करना।
- वर्तमान जीवन प्रणाली में स्वस्थचतुष्क की उपयोगिता सिद्ध करना।
- अजात विकारों की अनुत्पत्ति में स्वस्थचतुष्क का हेतुत्व बताना।
- युगानुरूप संदर्भ में स्वस्थचतुष्क की अपेक्षाओं को उल्लिखित करना।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में अध्येता द्वारा सभी संहिताओं से स्वस्थ संबंधी विषयों का अध्ययन कर उनके महत्वपूर्ण अंशों का संकलन किया गया है। इसके लिए चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, अष्टांगसंग्रह, अष्टांगहृदय की उपलब्ध प्रमुख टीकाओं को आधार बनाया गया है एवं उक्त संहिताओं एवं टीकाओं से प्राप्त तथ्यों का युगानुरूप संदर्भ में मूल्यांकन करके विषय को सुस्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

परिणाम के रूप में यह पाया गया कि आज से हजारों वर्ष पूर्व तात्कालिक परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए उपदिष्ट स्वस्थचतुष्क की उपयोगिता वर्तमान परिस्थितियों में और अधिक बढ़ गई है। इनमें निहित विधानों की सम्यक् अनुपालना से न केवल स्वास्थ्य का अनुवर्तन किया जा सकता है, अपितु रोगावस्था में भी इसके यथोचित पालन से शीघ्र ही आरोग्य लाभ किया जा सकता है। इसमें उल्लिखित उपाय स्वस्थ्यानुवर्तक होने के साथ–साथ चिकित्सात्मक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं। रोगों की भिन्न–भिन्न अवस्था में इनका

प्रयोग चिकित्सा के रूप में भी किया जाता है, तथापि सैद्धान्तिक रूप से उल्लिखित उन उपायों के व्यवहारिक प्रयोग में युगानुरूप परिवर्तन लाना वर्तमान में अपेक्षित है, ताकि आधुनिक समय में भी इनका सम्यक् अनुष्ठान करके स्वास्थ्यानुवर्तन एवं अजात विकारों की अनुत्पत्ति की जा सके।

मौलिक सिद्धांत – 29

''विरुद्धं तच्च न हितं ह्रत्संपद्विधिभिश्च यत्'' सिद्धांत पुष्ट्यर्थ विरुद्ध द्रव्य का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन

अध्येता : डा. मनोहर राम

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

सह–निर्देशक : डा. केदार लाल मीणा

वर्ष : 2003

आयुर्वेदीय संहिताओं में आहार, औषधि का उल्लेख सूत्रात्मक रूप में मिलता है। यह ज्ञान आज समीचीन है या नहीं या उन सूत्रों के अर्थ, विन्यास, परिष्कार की आवश्यकता है। इसी उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए आहार की वैरोधिक शास्त्रोक्त परिकल्पनाओं का व्यवहारिक संदर्भ में मूल्यांकित किया जाना इस शोध प्रबन्ध का ध्येय रहा है।

इस शोध प्रबन्ध में शोधकर्ता द्वारा कतिपय रोगों का अध्ययन वैरोधिक आहार के संदर्भ में तथा वैरोधिक आहार लेने के बाद धातुगत परिवर्तनों, रासायनिक परिवर्तनों, कोष्ठगत परिवर्तनों, स्रोतस्गत परिवर्तनों सहित समग्र शरीर पर पड़ने वाले परिवर्तनों का प्रयोगशालीय परीक्षण और मूल्यांकन किया गया है।

सम्पूर्ण वैरोधिक आहार की आयुर्वेदीय एवं आधुनिक विषय सामग्री पर विहंगम दृष्टिपात करने से यह प्रतीत होता है कि आयुर्वेदीय आहार दृष्टि, वैरोधिक आहार दृष्टि, प्रकृति के (स्थावर–जांगम) नजदीक है। शीत–उष्ण गुण भूयिष्ठ आहार द्रव्य शरीर के क्रियात्मक भावों को प्रभावित करते हैं।

मौलिक सिद्धांत – 30

अनुसन्धानात्मक वैशिष्ट्य क्रम में मधुमेहारि चूर्ण का मधुमेह रोग में प्रभावात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. शिव दयाल शर्मा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2003

भारत जैसे उष्ण कटिबंधीय एवं विकासशील देश में जहां मधुमेह व्याधि संसार के अन्य देशों की अपेक्षा व्यापक एवं उग्र है। वहां आनुसन्धानिक चिकित्सा एवं चिकित्सक का विशेष दायित्व बन जाता है। इसी समस्या को लक्ष्य बनाकर अध्येता ने शोध प्रबन्ध के माध्यम से यदा कथंचित सिद्धि प्राप्ति का यत्न किया है।

चयनित सभी रोगियों को 3 वर्गों में विभाजित किया गया तथा 16–16 रोगियों के तीन वर्ग बनाए गए।

वर्ग अ – इस वर्ग में Hypoglycemic tab. के साथ मधुमेहारि चूर्ण एवं पथ्यापथ्य का निर्देश किया गया।

वर्ग ब – इस वर्ग में Insulin आश्रित रोगियों को मधुमेहारि चूर्ण एवं पथ्यापथ्य का निर्देश किया गया।

वर्ग स – इस वर्ग में रोगियों को मात्र मधुमेहारि चूर्ण एवं पथ्यापथ्य का निर्देश किया गया।

औषध योग – मधुमेहारि चूर्ण (अनुभूत योग)

घटक द्रव्य –

1. गुडमार पत्र (मेषश्रृंगी)
2. जम्बू बीज
3. करेला बीज
4. बिल्व पत्र

5. निंब बीज
6. बबूल फली
7. सोंठ
8. मेथी बीज
9. आम्रास्थि मज्जा
10. सौंफ बीज
11. बला बीज
12. सनाय पत्र

इन सभी औषध द्रव्यों को समान मात्रा में लेकर चूर्ण बनाया गया ।

औषध मात्रा – 5–5 ग्राम प्रातः, सायं

अनुपान – उष्ण जल

प्रयोग अवधि – 2 माह

रोग की तीव्रता के आधार पर औसत लक्षणोपशमन अ वर्ग में मध्यम 51.4 प्रतिशत, ब वर्ग में सामान्य 44.1 प्रतिशत, स वर्ग में मध्यम 54.4 प्रतिशत हुआ। जो सांख्यिकीय दृष्टि से अधिकांश लक्षणों में अतिसार्थक रहा।

मौलिक सिद्धांत – 31

''आमवाते पंचकोलसिद्धं पानान्नमिष्यते'' सिद्धान्त पुष्ट्यर्थ आमवात रोग में पंचकोलसिद्ध पानान्न के प्रभाव का अध्ययन

अध्येता : डा. मुरलीधर पालीवाल

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2003

पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण एवं भौतिकवादी युग से प्रभावित होकर मनुष्य में कष्टप्रद, चिरकालिक आम समुद्भव व्याधि आमवात के लिए प्रभावी, सुरक्षित एवं सस्ती सुलभ आयुर्वेदिक औषध का अनुसंधान परक अध्ययन करना ही इस महानिबन्ध का उद्देश्य है।

चिकित्सीय अध्ययन हेतु आतुरों को 2 वर्गों में विभक्त किया गया –

प्रथम 'अ' वर्ग – 10 रोगियों को पंचकोलसिद्ध पानान्न (चक्रदत्त 25/2) को षडंगपानीय विधि से 20 ग्राम औषध से बने क्वाथ से निर्मित पान तथा तन्निर्मित अन्न, भात, यूष, यवागू आदि का सेवन कराया।

द्वितीय 'ब' वर्ग – 10 रोगियों को पंचकोलसिद्ध पानान्न के साथ रास्नादशमूलक क्वाथ (चक्रदत्त 25/5) 10 ग्राम औषध से बना क्वाथ + एरण्ड स्नेह 5 मि.लि. प्रातः, सायं सेवन कराया। औषध प्रयोग 90 दिन तक करवाया गया।

वर्ग 'अ' में लाक्षणिक तीव्रता उपशमन 37.16 प्रतिशत रहा जो अल्प लाभ की श्रेणी में है। वर्ग ब में लाक्षणिक तीव्रता उपशमन 50.31 प्रतिशत रहा जो मध्यम लाभ की श्रेणी में है। 'अ' वर्ग की औषध पंचकोलसिद्ध पानान्न की तुलना में वर्ग 'ब' की औषध पंचकोलसिद्ध पानान्न सह रास्नादशमूलक क्वाथ आमवात रोग में अधिक कार्मुक रही।

मौलिक सिद्धांत – 32

''सूत्रस्थाने तु वाग्भटः'' के परिप्रेक्ष्य में अष्टांगसंग्रह सूत्रस्थान का समीक्षात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. उमाशंकर शर्मा

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2003

चरक, सुश्रुत प्रभृति आचार्यों ने पृथक्–पृथक् ग्रंथो की रचना की एवं प्रचलित व प्रसिद्ध हुए। जिस विषय से संबंधित उत्कृष्ट विषय वस्तु जिस ग्रंथ में उपलब्ध हुई, उसका उद्घोष भी मनीषियों ने किया। ''सूत्रस्थाने तु वाग्भटः'' के संदर्भ में अष्टांगसंग्रह, सूत्रस्थान की विशेषताओं का अध्ययन कर उसकी यथार्थता को पुनः प्रतिस्थापित करने हेतु अध्येता ने महानिबन्ध का विषय चयनित किया है।

प्राथमिक रूप से अध्येता ने अष्टांगसंग्रह, सूत्रस्थान को श्रेष्ठ मानते हुए कार्य प्रारंभ किया है। जिसका तुलनात्मक अध्ययन, वृहत्त्रयी के अन्य ग्रंथ चरक संहिता, सुश्रुतसंहिता और अष्टांगहृदय के सूत्रस्थान से करके विचार विमर्शोपरान्त यथार्थ को पुनः प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया है।

वृहत्त्रयी के अन्तर्गत अधिकतम विद्वानों ने अष्टांगसंग्रह की गणना की है, उसमें भी अष्टांगसंग्रह सूत्रस्थान का विषय विवेचन सुव्यवस्थित, क्रमबद्ध, सुखावबोधयुक्त एवं युगानुरूप संदर्भ में उपयोगी है।

अतः वृद्ध वाग्भट रचित अष्टांगसंग्रह का सूत्रस्थान, चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता एवं अष्टांगहृदय, सूत्रस्थान से समृद्ध एवं श्रेष्ठ है।

मौलिक सिद्धांत – 33

संहिताओं में गोरस वर्ग का स्वरूप एवं समन्वयात्मक विवेचन

अध्येता : डा. योगेश कुमार

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2003

आयुर्वेदीय साहित्य में गोरस के आरोग्य उत्पादक भावों का एवं प्रायः सभी रोगों में गोरस द्रव्यों के सफल प्रयोगों का वर्णन मिलता है। वर्तमान काल में गोरस का स्वरूप क्या है ? इस विषय पर चिन्तन मनन की आवश्यकता महसूस कर महानिबन्ध हेतु इस विषय का चयन किया गया है।

प्राचीन साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य में उपलब्ध गौरस से संबंधित सभी विषयों का गहनता से अध्ययन एवं गौरस का आहार तथा औषध के रूप में विस्तृत विवेचन करना तथा इसके महात्म्य को उपस्थित करने का प्रयास करना आदि कार्य पद्धति के प्रमुख बिन्दु रहे हैं।

शोध प्रबन्ध के निष्कर्षात्मक विवेचन के लिए संहिताओं में प्राप्त गोरस के स्वरूप की प्रायोगिक अवधारणा की संपुष्टि की गई है। दुग्ध संपूर्ण भोजन के रूप में एवं ऐसे आहार की श्रेणी में है, जो सर्वतोभावेन हितकर है। प्राचीन एवं आधुनिक दोनों ही स्वरूपों का सामञ्जस्य करते हुए गोरस के द्रव्यों का ग्रहण किया जाना उचित है।

Maulik Siddhant – 34

Development of Ayurveda in India after independence - A critical study

Scholar : Dr. Sur Shyam Singh

Guide : Prof. B.L. Gaur

Year : 2004

The object of this research is to study the emergence of ayurved and its future prospects. Different committees and policies about ayurveda and administrative structure in different status hospital + man power in ayurveda and budget + expenditure.

This study is planned to review all the journals of ISM&H and policies of Govt. to assess the development in ayurveda at different times. Also reviewed all ayurvedic texts and allied literature along with modern literature.

From the research work it was derived that :

- Government should increase budget allocation to AYUSH department.
- To make totally research oriented institution.
- Teaching of ayurveda must be in sanskrit and english not in regional language.

मौलिक सिद्धांत – 35

चरकसंहिता में वर्णित मन एवं मनोवैज्ञानिक विषयों का विवेचनात्मक अध्ययन एवं मनोरोगों में उनकी उपादेयता

अध्येता : डा. राजेश उपाध्याय

निर्देशक : प्रो. बनवारी लाल गौड़

वर्ष : 2004

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में मनोविज्ञान का अध्ययन नितांत आवश्यक है। मनोविज्ञान द्वारा रोगों की उत्पत्ति व उत्पन्न रोगों का मन पर प्रभाव का अध्ययन आवश्यक है।

आयुर्वेद में उपलब्ध मनोवैज्ञानिक तथ्यों का युक्तिपरक विश्लेषण करना तथा चरकसंहिता में उपलब्ध मनोवैज्ञानिक पहलुओं के विवरण से आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में वर्णित मानसिक व्याधियों को स्पष्ट करने का प्रयास महानिबन्ध का उद्देश्य है।

कार्य योजना के अन्तर्गत चरकसंहिता में वर्णित मन एवं मनोरोगों के सभी विषयों का विस्तृत व गहन अध्ययन कर इनका सामंजस्य आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के मनोरोगों से करने का प्रयास करना तथा चरक संहिता में वर्णित मनोरोगों की चिकित्सा का भी अवलोकन करना तय किया गया।

प्रस्तुत महाप्रबन्ध में चरकसंहितोक्त मन एवं मनोविज्ञान के गूढ़ विषयों को अध्येता ने उद्घाटित करने का प्रयास किया है। साथ ही चरकोक्त मन एवं मनोरोगों तथा आधुनिकोक्त मनोरोगों को स्पष्ट करते हुए तथा आधुनिकोक्त मनोरोगों को आयुर्वेद से समन्वित कर प्रकाशित किया गया है।

मौलिक सिद्धांत – 36

चरकोक्त वादमार्गों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. विशाल कुमार शर्मा

निर्देशक : प्रो. ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2004

तन्त्र रूप में चरकसंहिता सिद्धान्तों का संग्रह है। अतः अनुसन्धाताओं के लिए यह ग्रंथ प्रत्येक क्षेत्र में अवसर प्रदान करता है।

चरक संहिता में 44 वाद मार्गों का उल्लेख मिलता है। शास्त्र के मौलिक तत्वों के अन्वेषण में वादमार्गों की उपयोगिता सिद्ध करना ही इस महानिबन्ध का उद्देश्य है।

शोध कार्य हेतु निम्न कार्य योजना बनाई गई –

(अ) विभिन्न दार्शनिक ग्रन्थों से विषय का संकलन करना।

(ब) चरकसंहिता में वर्णित वादमार्गों से समन्वयात्मक अध्ययन एवं संग्रहण करना ।

(स) वादमार्गों के चिकित्सोपयोगी तत्वों का संकलन करना ।

(द) उपर्युक्त संकलन के आधार पर वादमार्गों का समीक्षात्मक अध्ययन कर उनकी उपयोगिता सिद्ध करना।

आयुर्वेद के मौलिक सिद्धान्तों की व्यापकता का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि 44 वादमार्ग आयुर्वेदीय मौलिक सिद्धान्त ही हैं एवं अन्य सभी मौलिक सिद्धान्तों में ये पूर्ण रूप से व्याप्त हैं। वादमार्गों के ज्ञान के अभाव में न तो सिद्धान्तों की स्थापना ही की जा सकती है और न ही सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से समझने में समर्थ हो सकते हैं।

मौलिक सिद्धांत – 37

''मेध्या विशेषेण च शङ्खपुष्पी'' (च.चि. 1/3/31) चरकोक्ति का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. कमलेश कुमार शर्मा

निर्देशक : प्रो. ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2005

सृष्टि के आदि में व्यक्ति दीर्घायु और मेधा शक्ति सम्पन्न थे, किन्तु कालानुरूप ह्रास होने लगा। प्रकृति का नियम नहीं बदला जा सकता है, लेकिन मेधा का जो ह्रास हो रहा है उसका प्रतिबन्धन अवश्य किया जा सकता है।

इसी क्रम में ''मेध्या विशेषेण च शङ्खपुष्पी'' (च.चि. 1/3/31) चरकोक्ति के पुष्ट्यर्थ द्रव्यभूत चिकित्सान्तर्गत शङ्खपुष्पी रसायन के मेधावर्धक प्रभाव का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन करना ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

विभिन्न आचार्यों के मतों को ध्यान में रखते हुए बाल्यावस्था से यौवनावस्था पर्यन्त व्यक्ति का चयन किया गया, जिन्हें 3 समूहों में विभक्त किया गया–

वर्ग ''अ'' – बाल्यावस्था (4–16 वर्ष)

वर्ग ''ब'' – पूर्व यौवनावस्था (17–20 वर्ष)

वर्ग ''स'' – यौवनावस्था (21–30 वर्ष)

प्रत्येक समूह में 30 व्यक्तियों का चयन किया गया।

शंखपुष्पी के मेध्य रसायन के प्रभाव के अध्ययन हेतु लाक्षणिक (नाड़ीगति, भार, रक्तदाब आदि) तथा मनोवैज्ञानिक (बुद्धि परिलब्धि परीक्षा – IQ) तथा सहायक परीक्षा (sub test) की योजना की गई।

औषधि योग – शंखपुष्पी शार्कर,

शंखपुष्पी घनसत्व

ग्रन्थाधार – च.चि. 1/3/31

'अ' समूह को शंखपुष्पी शार्कर 3½ मि.लि. प्रातः एवं सायंकाल 3 माह तक देने की योजना बनाई गई, 'ब' एवं 'स' समूह को शंखपुष्पी घनसत्व का प्रातः एवं सायंकाल एक–एक कैप्सूल (प्रति कैप्सूल 290 मि.ग्रा. औषध) 3 माह तक देने की योजना की गई।

परिणाम रूप में औषधि सेवन पश्चात् बुद्धि परिलब्धि (IQ) पर औसत प्रभाव 3.67 प्रतिशत तथा सहायक परीक्षा (sub test) का औसत प्राप्त परिणाम 5. 50 प्रतिशत रहा। ध्यान एवं एकाग्रता तथा मानसिक संतुलन पर औसत प्रभाव 4. 09 प्रतिशत, धृति पर 8.82 प्रतिशत एवं स्मृति पर 3.35 प्रतिशत प्राप्त हुआ।

मौलिक सिद्धांत – 38

''व्यङ्ग.: रक्तप्रदोषजः'' (च.सू. 28/12) संदर्भ पुष्ट्यर्थ रक्तचन्दनादि लेप का विश्लेषणात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. प्रेम सिंह माली

निर्देशक : प्रो. ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2005

वर्तमान काल में युवा वर्ग में और विशेषकर स्त्री वर्ग में व्यङ्ग. की प्राप्ति उनके मानसिक तनाव को बढ़ाने वाली परिस्थितियों में अग्रगण्य है। पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में इस प्रकार की कान्तिहीन वैवर्ण्य युक्त मुखमण्डल वाली व्याधि अन्य निज दोषोत्पन्न व्याधियों से भी अधिक चिन्तनीय व्याधि हो गई है। मुख सौन्दर्य को बनाए रखने के लिए युवा वर्ग दूषित रासायनिक द्रव्यों से निर्मित विभिन्न प्रकार के बहुमूल्य सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग कर रहा है जिनका दुष्प्रभाव क्षणिक लाभ के बाद स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता हे।

विषय की समसामयिकता को देखते हुए अध्येता ने रक्त प्रदोषज विकार व्यङ्ग. में ''व्यङ्ग.: रक्तप्रदोषजः'' संदर्भ की पुष्टि के लिए रक्तचन्दनादि लेप को

चिकित्सा के लिए बाह्याभ्यन्तर रूप में प्रयुक्त करने हेतु शोध विषय के रूप में चयन किया है।

अनुसंधान हेतु रोगियों के दो वर्ग 'अ' और 'ब' बनाकर वर्ग 'अ' में 20 रोगियों को आभ्यंतर प्रयोगार्थ चूर्ण रूप में एवं बाह्य प्रयोगार्थ लेप रूप में औषध दी गई एवं वर्ग 'ब' के 20 रोगियों को बाह्य लेपनार्थ औषधि देने की योजना की गई।

औषध योग – रक्तचन्दनादि लेप (शार्ङ्ग.धरसंहिता, उत्तरखण्ड 11/9)

मात्रा – आभ्यन्तर प्रयोगार्थ 5 ग्राम दिन में 2 बार जल के साथ तथा बाह्य लेपार्थ सूक्ष्म चूर्ण रूप में औषध को गुलाब जल में मिलाकर प्रयोग कराया गया।

औषध प्रयोग अवधि – 2 माह रखी गई

द्वैमासिक औषध प्रयोग से रोगियों के वर्ग 'अ' में 57.56 प्रतिशत एवं वर्ग 'ब' में 46.02 प्रतिशत लाभ प्राप्त हुआ जो कि सांख्यिकीय दृष्टि से मध्यम लाभ की श्रेणी में आता है।

मौलिक सिद्धांत – 39

''स्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात्'' (च.चि. 26/34) सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में मूत्रकृच्छ्र रोग में मूत्र विरेचनीय महाकषाय का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. लोकेश चन्द्र शर्मा

निर्देशक : प्रो. ओम् प्रकाश उपाध्याय

वर्ष : 2005

वात दो प्रकार से कुपित होकर रोगोत्पत्ति में कारण बनता है। प्रथम धातुक्षय पूर्वक, द्वितीय आवरण पूर्वक। शोध का अभिधेय मूत्रकृच्छ्र एक आवरण जन्य व्याधि है। अतः अध्येता ने 'मूत्रावृते मूत्रलानि ..... (अ.सं.) चिकित्सा सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए मूत्रकृच्छ्र रोग की चिकित्सार्थ मूत्रविरेचनीय

महाकषाय की उपयोगिता को सिद्ध करने हेतु महानिबन्ध के विषय का चयन किया है।

रोगियों को चयनोपरान्त साश्मरी एवं अश्मरी रहित इस प्रकार दो वर्गों (वर्ग 'अ' व वर्ग 'ब') में विभक्त कर प्रत्येक वर्ग में 13–13 आतुरों को रखा गया।

प्रत्येक आतुर को मूत्र विरेचनीय महाकषाय (चरकसंहिता, सूत्रस्थान 4/35) 2 तोला की मात्रा में प्रातः, सायं भोजन पूर्व 2 माह तक औषध प्रयोग कराने की योजना की गई।

रोगियों का चिकित्सा पूर्व एवं चिकित्सा पश्चात् X-ray KUB region एवं USG परीक्षण कराने की योजना की गई।

X-ray परीक्षण (KUB) द्वारा प्राप्त परिणाम :

(1) वर्ग 'अ' के 11 आतुरों में से 5 में पूर्ण लाभ, 1 में आंशिक लाभ तथा शेष में अलाभ रहा।

(2) वर्ग 'ब' के सभी आतुरों में चिकित्सा पूर्व ही X-ray KUB region की दृष्टि से कोई विकृति नहीं थी।

USG परीक्षण द्वारा प्राप्त परिणाम :

(1) वर्ग 'अ' के 5 आतुरों में पूर्ण लाभ, 3 आतुरों में आंशिक लाभ, 2 आतुरों में अलाभ तथा 1 आतुर में रोग वृद्धि देखी गई।

(2) वर्ग 'ब' के 3 आतुरों में पूर्ण लाभ, 3 आतुरों में आंशिक लाभ, एक आतुर में अलाभ रहा।

वर्ग 'ब' के 13 आतुरों में से 2 आतुर मध्य में चिकित्सा त्याग कर चले गए तथा 4 आतुर USG की दृष्टि से चिकित्सा पूर्व ही सामान्य थे । इस कारण वर्ग 'ब' में लाभ प्रतिशत का आकलन 7 आतुरों के आधार पर किया गया।

मौलिक सिद्धांत – 40

''व्याधि प्रत्यनीक'' सिद्धान्तानुक्रम में न्यग्रोधादि चूर्ण का मधुमेह रोग पर सैद्धान्तिक एवं चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. हंसराज शर्मा

निर्देशक : डा. आशुतोष तिवारी

वर्ष : 2005

मधुमेह रोग का आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में वर्णित तत्समान व्याधि Diabetes Mellitus के साथ समन्वयात्मक अध्ययन तथा मधुमेह रोग चिकित्सार्थ चयनित योग ''न्यग्रोधादि चूर्ण' की कार्मुकता ज्ञात करना, इस शोध महानिबन्ध का उद्देश्य है, जिससे इस दुश्चिकित्स्य महागद के लिए उत्कृष्ट औषधि एवं उपक्रम निर्धारित किए जा सके।

अध्येता ने अपने शोध प्रबन्ध में इन्सुलिन नहीं ले रहे रोगियों (NIDDM) को चयनित कर 10–10 के दो वर्ग बनाकर औषध सेवन करवाया।

वर्ग 'अ' – इस वर्ग के आतुरों को केवल न्यग्रोधादि चूर्ण (योग रत्नाकर, प्रमेहचिकित्सा) का सेवन कराया गया तथा पथ्यापथ्य का निर्देश दिया गया।

वर्ग 'ब' – इस वर्ग के आतुरों को Hypoglycaemic Glibenclamide 5 mg दिन में 1 बार दी गई, साथ में न्यग्रोधादि चूर्ण सेवन कराया गया तथा पथ्यापथ्य का निर्देश दिया गया।

औषध मात्रा एवं अनुपान – न्यग्रोधादि चूर्ण 5–5 ग्राम की मात्रा में प्रातः, मध्याह्न तथा सायंकाल त्रिफला स्वरस के अनुपान से सेवन कराया गया।

औषध सेवन अवधि – दो माह रखी गई ।

प्रति आतुर लक्षण तीव्रता में औसत लाभ वर्ग 'अ' में सामान्य (42.76 प्रतिशत) तथा वर्ग 'ब' में मध्यम (56.66 प्रतिशत) मिला। इसी प्रकार प्रति लक्षण तीव्रता के आधार पर लक्षणोपशमन औसत लाभ वर्ग 'अ' में सामान्य (42.3 प्रतिशत) तथा वर्ग 'ब' में मध्यम (53.64 प्रतिशत) हुआ, जो सांख्यिकीय दृष्ट्या अधिकांश लक्षणों में सार्थक रहा।